International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 792-793

ध्वनिकार के पूर्ववर्ती आचार्य : शङ्कुक

डॉ0 पूनम राय

प्रवक्ता, सेंट जॉन्स अकादमी, करछना, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

साहित्य–शास्त्र में जितनी कृतियाँ उपलब्ध हैं उनमें भरतकृत नाट्यशास्त्र प्राचीनतम है। नाम्ना यद्यपि यह नाट्यशास्त्र सम्बन्धी विषयों का ही ग्रन्थ प्रतीत होता है, किन्तु यह विविध कलाओं का आकार ग्रन्थ है। इतिहास में इस ग्रन्थ को इतना महत्व प्राप्त हुआ कि इसकी महिमा के प्रकाश में सजातीय ग्रन्थों की खद्योतमाला ऐसी निष्प्रभ हो गई कि काल की गति उन्हें सर्वथा विस्मृति के गर्त में धकेल गयी।

मूल शब्द : साहित्य–शास्त्र, नाट्यशास्त्र, शङ्कुक।

प्रस्तावना

पिछले एक शतक से नाट्य शास्त्र के रचयिता भरतमुनि के व्यक्तित्व के विषय की तरह नाट्य शास्त्र की रचनाकाल के विषय में भी विद्वानों ने श्रमपूर्वक अन्वेषण किया और उनका यह प्रयास अनेक निष्कर्षों पर निकालने पर भी फलप्रद ही रहा। इस क्रम में प्रथम उद्योग नाट्यशास्त्र के 1–14 अध्याय के सम्पादक पी0 रेग्नों तथा जे0 ग्रांसे ने किया तथा नाट्यशास्त्र का रचनाकाल इसके काव्य शास्त्रीय तथा छन्द शास्त्रीय स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए ईसवीसन से कम से कम एक शती पूर्व निर्धारित किया। हरप्रसाद शास्त्री ने नाट्य शास्त्र के विभिन्न तत्वों के विश्लेष्णों के उपरान्त इसका निर्माण काल पी0 रेग्नो की तरह ईसा पूर्व दो शती निर्धारित किया। कर्नल श्री जेकेबी ने नाट्यशास्त्र की प्राकृतभाषा के अंशों का विश्लेषण करते हुए नाट्यशास्त्र का रचनाकाल ईसा की तीसरी शती निर्धारित कर डाला। प्रो0 सिल्वा लेवी ने नाट्यशास्त्र में प्रयुकत शब्दों के आधार पर नाट्यशास्त्र का समय निश्चित करने का उद्योग किया। इनके मत में स्वामी सुगृहीतनामा आदि शब्दों के प्रयोग के आधार पर नाट्यशास्त्र का समय निश्चित होता है, क्योंकि इन शब्दों का प्रयोग नहपाण तथा चष्टन क्षत्रपों के शिलालेखों में आया है। अतएव शिलालेखों में प्रयुक्त उपर्युक्त शब्दों के साम्य तथा शक आदि जातियों के उल्लेख के कारण नाट्यशास्त्र का रचनाकाल ईसवी दूसरी शती अर्थात् इन क्षत्रपों के स्थितिकाल के आसपास का समय है। नेपाल शब्द का प्रथम उल्लेख समुद्रगुप्त प्रशस्ति में तथा महाराष्ट्र शब्द का महावंश (ईसा पूर्व 5वीं शती) तथा ऐहोल अभिलेख (ई0 634) में मिलता है, काणे ने इसी आधार का निषेध करते हुए यह प्रतिपादित किया कि ऐसा क्यों न माना जाए कि इन देशों का प्रथम उल्लेख नाट्यशास्त्र में ही हुआ है, क्योंकि प्रथम उल्लेख होने से यह निश्चय नहीं हो सकता कि इन देशों के इसके पूर्व ये नाम ही नहीं थे तथा इन शिलालेखों में इन देशों के पश्चाद्वावी काल में उल्लेख होने से नाट्यशास्त्र का रचना काल आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। सेबुबन्ध काव्य (प्रवरसेनप्रणीत) में महाराष्ट्री प्राकृत का जिस परिष्कृत रूप में प्रयोग हुआ है उससे महाराष्ट्री प्रयोग करने वाले जनपद का इन शिलालेखों के रचनाकाल के सदियों पूर्व अस्तित्व का अनुमान लगाया जा सका है। काणे के अनुसार नाट्यशास्त्र में उल्लिखित विश्वकर्मा, पूर्वचार्य, कामसूत्र आदि के उल्लेख से नाट्यशास्त्र का काल ईस्वी सन् के प्रारम्भ से पूर्वभावीकाल की ओर अधिक नहीं बढ़ाया जा सकता किन्तु इसके बाद की तिथि को ही अधिक निश्चय के साथ स्वीकार किया जा सकता है। कालिदास ने स्पष्ट रूप से विक्रमोवशीर्य में भरतमुनि को नाट्यशास्त्र का आचार्य स्वीकृत कर उनके द्वारा स्वीकृत आठ रसों की चर्चा की है। बाण ने भरतप्रवर्तित संगीत का उल्लेख किया है। नाट्यशास्त्र में केवल चार ही अलंकारों का उल्लेख मिलता है जब कि दण्डी, भामह आदि द्वारा इसकी संख्या को तीस तक पहुँचाया गया था। इन सबसे यही सिद्ध होता है कि छठी शती तक नाट्यशास्त्र का पाठ स्थिर हो चुका था।

श्री कीथ तथा श्री रेप्सन ने नाट्यशास्त्र का रचनाकाल तीसरी शती मानते हुए इससे अधिक उत्तरभादिता का प्रतिषेध किया। डॉ0 री मनोमोहन घोष ने नाट्यशास्त्र के अंग्रेजी भाषान्तर की भूमिका में भाषा वैज्ञानिक, छन्दः शास्त्रीय खौगोलिक, जाति आदि सामग्री के आधार तथा काव्य शास्त्र संगीतशास्त्र, कामशास्त्र एवं बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र के ऐतिहासिक साक्ष्य तथा अभिलेखों के सामग्री के प्रकाश में नाट्यशास्त्र के रचनाकाल पर विस्तार से विचार किया है। इनका मत है कि प्रवृत्तियों के साथ भौगोलिक अभिधानों की संयोजना महाभारत एवं अन्य पुराणों के अनुकरण पर नाट्यशास्त्र में संयोजित की गई है।

श्री मनोमोहन घोष ने क्षत्रपादि के अभिलेखों में विद्यमान नाट्यशास्त्रीय समताओं की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए बतलाया कि इनमें प्रयुक्त गान्धर्व, सौष्ठव तथा नियुद्ध शब्द नाट्यशास्त्र की परिभाषा के अधिक अनुकूल हैं। अतः नाट्यशास्त्र का स्थितिकाल दूसरी शती से पूर्वभावी तो है ही। कालिदास तथा भास भी नाट्यशास्त्र से परिचित अवश्य थे इसका कारण कालिदास ने अंगहार, वृत्ति, सन्धि, वस्तु, मायूरी आदि नाट्यशास्त्रीय शब्दों का प्रयोग किया है तथा भास ने विदूषक, प्रस्तावना, सूत्रधार, मुद्र मुख जैसे नाट्यशास्त्र के पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग होना। भास का समय (ईसा से पूर्वभावी) कौटिल्य से भी प्राचीन माना है, इसलिए नाट्यशास्त्र का समय भास से निश्चित ही पूर्ववर्ती है।

इस प्रकार नाट्यशास्त्र के स्थिति काल के विनिश्चय में प्रत्येक विवेचक विद्वान ने पर्याप्त ऊहापोह किया है परन्तु इसे निश्चित काल विशेष में निर्भ्रान्त स्थिर करना कठिन है। यह निश्चित है कि नाट्यशास्त्र कालिदास तथा भास के पूर्ववर्ती है। इस संदर्भ में हमारी दृष्टि नाट्यशास्त्र की उपरली सीमा पर ही पहुँचाती है जिसके प्रभाव की परिधि में भास तथा अश्वघोष जैसे

प्राचीन नाटककार आते हैं।

यदि नाट्यशास्त्र के सूत्रभाष्य शैली के स्वरूप पर विचार करें तो इसकी अतिप्राचीनता स्पष्ट होगी सूत्रकाल के आस–पास रचित होने के कारण कदाचित् सूत्ररूप नाट्यशास्त्र को नाट्यवेद कहकर वेद सदृश सम्मान भी दिया गया है। यदि नाट्यशास्त्र के सूक्ष्ममय स्वरूप में उत्तरकाल में कुछ आर्याएँ तथा पद्यात्मक विवरण तथा यवनादि जुड़ते गये होंगे तो केवल इतने आधार को लेकर समग्र नाट्यशास्त्र को अर्वाचीन नहीं माना जा सकता। क्योंकि इसके प्रतिज्ञात के महत्वपूर्ण तथा अधिक विस्तृत भाग की रचना ईस्वी पूर्व पाँचवी शती हो गयी थी। यदि इसमें कुछ प्रक्षिप्तांश का समायोजन हुआ भी हो तो वह एक दो शती में यत्र तत्र हुआ होगा जैसा कि अनेक पुराणों, महाभारत आदि में भी हुआ है। मनोमोहन घोष तथा रामकृष्णकवि दोनों नाट्यशास्त्र के अधिकारी विद्वान तथा समग्र नाट्यशास्त्र के सम्पादक तथा अनुवादक भी थे। दोनों के विस्तीर्ण मनन का एक ही परिणाम है – नाट्यशास्त्र की ईसा पूर्व पाँचवी शती में स्थितिकाल निर्धारण, जो स्वीकार्य ही प्रतीत होता है।

इन सभी निष्कर्षों को दृष्टि में रखने पर यह अनुमान सहज ही लगता हे कि ईसा से पाँच शती पूर्व नाट्यशास्त्र का ऐसा रूप लोक–प्रसिद्ध अर्जित कर चुका जिसमें भाव, रस, प्रेक्षागृह, रूपक–विभेद आदि का विवरण तथा तथा जिसका ज्ञान, भास, अश्वघोष, कालिदास जैसे नाट्यकारों को था। इसके बाद तो ऐसा कोई भी काव्य अथवा नाट्यशास्त्रीय आचार्य कृतिकार नहीं था जो इसके प्रभाव क्षेत्र में अपनी रचना का निर्माता न हुआ हो। इस प्रकार स्पष्ट है कि ईस्वी पूर्व पाँचवी शती से पूर्व ही जब नटसूत्रादि के रूप में नाट्य – विद्या के प्रतिपादक ग्रन्थ पाणिनी की अष्टाध्यायी (समय 800 ईसा पूर्व की रचना) के समय बन चुके थे तो इससे भी पूर्ववर्ती नाट्य प्रयोग किसी सशक्त परम्परा से अनुप्राणित थे। अतएव पाणिनी के तीन सौ वर्ष पश्चात् नाट्यशास्त्र का रचना काल माना जाये तो यह प्रामाणिकता के अधिक समीप होगा जो निश्चित रूप में ईसा से पाँच शर्ती पूर्ववर्ती है।

भरतसूत्र के दूसरे प्रसिद्ध व्याख्याकार शंकुक है, नाम से ये काश्मीरी आचार्य प्रतीत होते हैं डा0 कान्ति चन्द्र पाण्डे के अनुसार इनका सम्बन्ध भी शैव दर्शन से था। किन्तु इनकी चिंतन पद्धति भी, लोल्लट की चिंतनपद्धति के समान, शैव दर्शन के अधिक अनुकूल नहीं पड़ती। अतएव पुष्ट प्रमाणों के अभाव में केवल प्राप्त उद्धरणों के आधार पर तो इन दोनों को शैव दार्शनिक मानने में सामान्यतः संदेह ही होता है। इसके विपरीत शंकुक के विषय में यह नवीन अनुसंधान अपेक्षाकृत अधिक ग्राह्य प्रतीत होता है कि उन पर बौद्ध न्याय का प्रभाव था। सम्भवतः नवीं शती के उत्तरार्द्ध में बुद्ध समय तक ये लोल्लट के समकालीन रहे होंगे। अभिनवभारती आदि में प्राप्त शंकुक से सम्बद्ध उद्धरणों में रस के प्रति आग्रह सर्वथा स्पष्ट है – शंकुक ने रस के स्वरूप, निष्पत्ति और स्थान आदि का अनुसन्धान जिस उच्चतर दार्शनिक भूमिका पर किया है, इसे रस–सिद्धान्त के तात्विक विकास में निश्चय ही सहायता मिली है। वस्तुतः शंकुक की दार्शनिक पृष्ठभूमि भट्टलोल्लट से भी अधिक सुदृढ़ और गंभीर है– और रस को शब्दार्थ – धर्म की निरंतर भूमिका से ऊपर उठाकर 'अनुमान' आदि मन की क्रिया के रूप में उपस्थित कर उन्होंने रस सिद्धान्त की महत्व–प्रतिष्ठा में मूल्यवान योग दिया है। लोल्लट की भाँति शंकुक ने भी रस को नाट्य रस के अर्थ में ही ग्रहण किया है, किन्तु लोल्लट जहाँ अनुकार्य और अनुकर्त्ता पर ही रफ जाते हैं, वहाँ शंकुक रस को सहृदय तक पहुँचा देते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिनव भारती, अभिनवगुप्त, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा; 1963।
2. काव्यालंकार, भामह, बाल मनोरमा सीरीज, मद्रास; 1956।
3. किरार्ताजुनीय, भारवि; चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस, 1952।
4. काव्यालंकार, श्री रामदेव शुक्ल, चौखम्बा–विद्याभवन, वाराणसी; 1967।
5. रस–सिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण, आनन्द प्रकाश दीक्षित, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; 1972।
6. रस–गंगाधर, चिन्मयी माहेश्वरी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर–4; 1974।
7. रस–गंगाधर, पण्डितराज जगन्नाथ, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी; 1987।
8. काव्यालंकार, भामह, बाल मनोरमा सीरीज, मद्रासा; 1956।
9. भारतीय साहित्य शास्त्र, पं0 बलदेव उपाध्याय, नन्द किशोर एण्ड सन्स, वाराणसी; 1963।
10. काव्य–दर्पण, विद्या वाचस्पति पंडित रामदहिन मिश्र, ग्रन्थमाला कार्यालय, पटना; 1973।
11. भारतीय काव्यशास्त्र के प्रतिनिधि सिद्धान्त, प्रो0 राजवंश सहाय 'हीरा', चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी; 1967।
12. काव्यालंकार (नमिसाधु टीका सहित), रूद्रट, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी; 1966।
13. काव्यालंकार सार–संग्रह एवं लघुवृत्ति की व्याख्या, डा0 राममूर्ति त्रिपाठी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग; 1966।
14. श्रृंगाररस भावना और विश्लेषण, रमाशंकर जैतली, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर; 1972।
15. श्रीवाग्भटाचार्य विरचितः रसरत्न समुच्चयः, पं0 श्री धर्मानन्द शर्मणा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना; 1962।